आई.एस.एस.एन. संख्या : 2454–2458
नवरचना NAVRACHNA
www.grefiglobal.org/journals/navrachna.2018
वर्ष 4, अंक 1–2, जून–दिसम्बर 2018, पृ. 26–38

आर.के. नारायण के उपन्यासों में सशक्त और निर्बल स्त्री

प्रीति तिवारी*

सामाजिक संरचना के अध्ययनों एवं अवलोकनों के आधार पर यह देखा गया है कि स्त्रियाँ चाहे सबल रही हों या निर्बल, दोनों ही परिस्थितियों में वे किसी न किसी प्रकार से पितृसत्तात्मक समाज और पुरूष वचर्स्व से अलग नहीं रह पायी हैं। पितृसत्तात्मक समाज ने इस प्रकार स्त्री पर अपना अधिकार पाने में सफलता प्राप्त की और आज भी किसी न किसी क्रम में वह उन्हें अधीन बनाने के प्रकरण में सफल देखा जाता रहा है। इस बात से बिल्कुल भी इंकार नहीं किया सकता कि समाज में ऐसी स्त्रियाँ बिल्कुल भी नहीं रही हैं जिन्होंने अपना स्वर नारी उत्पीड़न, शोषण और अधिकार के खिलाफ न उठाया हो। यदि ऐसा न होता तो शायद आज हम स्त्री अध्ययन या नारीवादी धारा को जन्म ही न दे पाते। यह कार्य यदि हम कहें कि केवल स्त्री के प्रयास से हुआ तो बात बिल्कुल असहज सी लगती है, बल्कि उनकी आवाज को बाहर लाने और समाज के हर स्तर पर पहुंचाने में नारीवादी दृष्टिकोण रखने वाले पुरूषों का भी सहयोग रहा है।

हम आज अपने नारीवादी आन्दोलनों, मांगों के माध्यम से स्त्री को एक ऐसी स्थिति तक ला पायें है कि उन्हें निर्बल से सबल बनाया जा सके और उन्हें उनका उचित अधिकार प्राप्त हो सके। अथक प्रयासों एवं आन्दोलनों के बाद भी स्त्री की स्थिति आज के संदर्भ में पूरी तरह सुधर नहीं सकी है, बल्कि आज भी एक बहुत बड़ा हिस्सा इन नारीवादी सुधारों एंव आंदोलनों से रहा अछूता है और पितृसत्ता की जंजीरों में जकड़ा हुआ है। आज भी स्त्रियाँ शोषण की स्थिति में जी रही है। निर्बल और सबल स्त्री का सवाल केवल आज के ही संदर्भ में समझना उचित नहीं होगा, बल्कि हमें आमूल परिवर्तन लाना है तो इतिहास के पन्नों को हमें पुनः से व्याख्यापित करने की जरूरत है। इनमें हमारे अनेकों धार्मिक सांस्कृतिक ग्रंथों और समाज का आइना प्रस्तुत करने वाले साहित्य की एक बड़ी श्रंखला मौजूद है। यद्यपि प्रस्तुत शोध पत्र में मेरा मुख्य प्रयास आर.के.नारायण के चयनित उपन्यासों में सबल और निर्बल स्त्रियों को ढूंढ़ने का प्रयास होगा।

साहित्य चूंकि अन्य लेखों एवं ग्रन्थों की तरह अतीत को समझाने में मदद करता है, इसलिए इनकी उपयोगिता को नकारा नहीं जा सकता है। जैसा कि हम जानते हैं कि साहित्य को समाज का

---

*शोध छात्रा, सेन्टर फॉर डवलेपमेन्ट स्टडीज, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद–211 002 उ.प्र.।

दर्पण कहा जाता है, इस दृष्टि से यह बात अनिवार्य हो जाती है कि हम इन साहित्यों को एक नये सिरे से समझे और नारीवादी दृष्टिकोण से नारी प्रश्नों को आज के संदर्भ में उदाहरण के तौर पर पेश कर सके।

आर.के. नारायण अपनी इच्छाशक्ति और अनुभवों के आधार पर समाज के सूक्ष्म बिन्दुओं को बहुत ही सुंदर ढंग से प्रस्तुत करने में सफल पाये गये हैं। उन्होंने अपने उपन्यासों में स्त्री के हर पक्ष को बखूबी चित्रित किया है तथा एक स्त्री का जीवन किन–किन पक्षों से प्रभावित होता है, उसको भी प्रस्तुत करने का सफल प्रयास किया है। नारायण के बारे में यह भी माना जाता है कि उनके पात्र उनके निजी अनुभवों और सामाजिक स्थिति को दर्शाने में हमेशा ही कामयाब रहे हैं।

जैसा कि कुमकुम सांगरी और सुदेश वैद्य एंग्लो–भारतीय साहित्य के बारे में बताते हैं कि ऐंग्लो–भारतीय साहित्य वास्तव में एक प्रकार से भारतीय साहित्य की उपसंस्कृति है जिसका अस्तित्व भारत में ब्रिटिश लोगों की उपस्थिति के फलस्वरुप आया, और इस प्रकार का साहित्य सिद्धान्त रूप में मुख्य साहित्य में भारतीय–ब्रिटिश के कार्य का सम्मिलित स्वरुप है। इस तरह से वह यह भी मानते है कि हमारी संस्कृति का लगातार विकास हुआ है और वह यूरोपियन सम्राज्यवाद एवं औपनिवेशवाद के नुकसान पहुँचाने वाले पक्षों के विरूद्ध खड़ा भी हुआ है।

आज हम जो भी भारतीय अंग्रेजी साहित्य देख पा रहे हैं, वह बंगाली भद्रलोक या सम्मिलित लोगों के प्रयास एवं दबाव के फलस्वरूप सामने आये। सशक्त और कमजोर स्त्री के पक्ष को जानने के लिए जैसा कि थारू अपने लेख Tracing Savitri's Pedegree में बताती है कि यह आवश्यक और अनिवार्य हो जाता है कि हम अंग्रेजी–भारतीय साहित्य की धड़कन का समझने के लिए उस ज्ञान का प्रयोग करें जो कि उन पक्षों को सामने ला सकें और हम समाज और साहित्य की वास्तविकता को समझ सकें। सशक्त नारी के परिप्रेक्ष्य में यदि देखें तो यह कहा जा सकता है कि यहां उन नारियों का चित्रण समझा जाये जो कि स्वयं पितृसत्तात्मक संरचना के विरोध में खड़ी हुई हैं और उसका सामना अपनी तार्किक शक्ति से डटकर करती हैं। निर्बल स्त्रियों के संदर्भ में जब हम बात करते हैं तो उन स्त्रियों का रूप उभरकर सामने आता है जो पितृसत्तात्मक संरचना के अन्तर्गत जीवन के हर पक्ष में अधीन स्थिति में पायी जाती हैं और इसके विरोध में खड़े होने का साहस नहीं कर पाती है। इस आधार पर सामाजिक संरचना को दो वर्गों में विभाजित किया जा सकता है, सशक्त में उन स्त्रियों की भूमिका को समझना आवश्यक जो कि पितृसत्ता द्वारा निर्मित एवं निर्धारित संस्थाओं, प्रतिबन्धों, कर्मकाण्डों के विरूद्ध अपनी आवाज देने में सक्षम हो पाती हैं। यह बात भी उतनी ही सही है कि समाज में हमेशा उन स्त्रियों का अस्तित्व देखा गया है जो कि इन संस्थाओं के बंधन से अपने आप को अलग कर सकी और इनके विरूद्ध खड़ी होकर न्याय और समानता की मांग के लिए अपने स्वर बुंलद कर सकी। दूसरी तरफ यह बात भी उतनी ही सही है कि वे स्त्रियां भी हमेशा से समाज का अभिन्न अंग रही है जिन्होंने पितृसत्तात्मक संरचना के सामने अपने आपको समर्पित कर दिया और चाहे, अनचाहे तरीकों से पितृसत्तात्मक संरचना का भाग बन गयी। यहां पर आर.के. नारायण अपने उपन्यासों के माध्यम से स्त्री जीवन के विभिन्न पक्षों को प्रस्तुत करने में सक्षम रहे है। परन्तु इन उपन्यासों में ज्यादातर पितृसत्तात्मक संरचना में रहने वाली स्त्रियों का चित्रण किया गया है जो कि पितृसत्तात्मक संरचना के विरूद्ध जाने में अक्षम पायी जाती है। इस बात से इंकार नहीं किया जा सकता है पिछले दो सौ सालों में हमारी संस्कृति का लगातार विकास तो हो रहा है परन्तु यह यूरोपीय

साम्राज्यवाद और औपनिवेशवाद के उन पक्षों को हटाने में अक्षम रहा जिनसे कि हमारे समाज एवं साहित्य पर दुष्प्रभाव पड़ा। ब्रिटिश शासन की आर्थिक संरचना और राजनीतिक संरचना ने निश्चित रूप से हमारी परम्परागत संस्थाओं और हमारे दैनिक कार्य–कलापों से संबंधित मूल्यों को विचलित किया जो कि सामाजिक दृष्टि से हमारी एकता के लिए उपयुक्त थे। विक्टोरियन मिथकों में भी स्त्री की लौकिक पवित्रता पर बल दिया जाता देखा गया है।

विक्टोरियन लेखक भी यौनिक प्रतिबन्धों पर व नैतिकता के उत्थान को अधिक महत्व देते हैं तथा यह भी मानते हैं कि स्त्रियों की यौनिक उत्तेजना को सही तरीकों से न नियंत्रित किया गया तो यह समाज के लिए खतरनाक हो सकता है। एक स्त्री जो कि एक पुरूष की उत्तेजना के विरूद्ध खड़ी होती है, तो उसे प्राकृतिक रूप में पवित्र माना जाता है। एक स्त्री की पवित्रता ईश्वर की पवित्रता है यह एक दैवीय प्रकाश को फैलाने वाली मानी जाती है (Sangiri and Sudesh Vaid1989)।

यदि उपरोक्त संदर्भ में आर.के. नारायण के उपन्यास 'अंधेरा कमरा' और 'द गाइड' के संदर्भ में रखकर विश्लेषण किया जाये तो यह स्पष्ट होता है, कि किस तरह से सावित्री जो कि 'अंधेरा कमरा' की मुख्य स्त्री–पात्र है, हमेशा पवित्रता को लेकर चलती है, और अपने पति द्वारा धर्म पत्नी का स्थान प्राप्त करती है। ठीक इसी प्रकार से स्त्री का यही चित्रण 'द गाइड' में राजू की मां के द्वारा भी प्रस्तुत होता है और वह कहती है कि पत्नी धर्म पति की सेवा और उसके अनुसार चलने में ही है। ठीक इसी प्रकार का चित्रण 'कला स्नातक' उपन्यास में मुख्य किरदार चंद्रन की मां द्वारा भी देखने को मिलता है जो कि मानती है कि पति–पत्नी की जोड़ियां ईश्वर द्वारा बनायी जाती है और वही तय करता है कि कौन किसकी पत्नी और किसका पति होगा।

आर.के. नारायण के उपन्यास 'अंधेरा कमरा' के बारे में कहा जाय तो सावित्री का चित्रण चरित्रवान, पवित्र, शक्तिहीन, निःस्वार्थ प्रेम, कष्टों को सहने वाली और हमेशा धर्मपत्नी के आदर्शों का पालन करने वाली और आपने पति की हमेशा उन्नति सोचने वाली दिखाई गई है।

आर्थिक आधार पर स्त्री की स्थिति

निर्णय की स्थिति का यदि अवलोकन किया जाये तो इसका मुख्य आधार आर्थिम माना जा सकता है। यहां पर स्त्री के आर्थिक रूप से स्वंतत्र न होना उसे सबल और निर्बल की स्थिति में ला खड़ा कर देता है। एक स्त्री के सबल और निर्बल अवस्था सामाजिक और आर्थिक कारणों पर निर्भर करती है, जिसमें कि धार्मिक व्यवसाय और सांस्कशतिक पक्षों का भी सहयोग देखा जाता है और ऐसी स्थिति में स्पष्ट लिंग अवस्था की कल्पना कर पाना बहुत कठिन हो जाता है। (Jain and Mahan 1996)

जैसा कि नेहरू खुद भी स्त्री के विभिन्न पक्षों की बात करने के साथ–साथ स्त्री की आर्थिक आत्मनिर्भतर पर भी बल देते हैं, और मानते हैं यह आर्थिक आत्म निर्भरता स्त्री को सबल बनाने में निश्चित ही सक्षम होगी। जैसा कि 1936 में नेहरू अपने एक सम्बोधन में कहते हैं कि स्त्री की स्वतंत्रता राजनीतिक स्थिति से ज्यादा आर्थिक स्थिति पर निर्भर करती है, और यदि एक स्त्री आर्थिक रूप से स्वतंत्र नहीं है और खुद से कमाने वाली नहीं है तो उसे अपने पति या अन्य व्यक्ति पर निर्भर होना ही पड़ेगा और निर्भरता कभी स्वतंत्रता प्रदान नहीं करती है। नेहरू का आर्थिक पक्ष पर बल स्त्री मुक्ति और स्वतंत्रता के सारे प्रश्नों का उत्तर प्रदान करती है। और यदि वे आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर है तो उनका विकास होना तय है और वे अपनी समस्याओं को निवारण करने में सक्षम होगी।

आर.के. नारायण के उपन्यास 'द डार्क रूम' के प्रारम्भ में एक जगह सावित्री अपने पति रमणी से कहती है कि मेरे पास पैसे खत्म हो गए है, शाम के लिए सब्जी खरीदनी है। इस पर रमणी सावित्री को एक रूपया देकर कहता है कि एक रूपये से काम चलेगा? और वे रूपया देकर चल देते हैं। यहाँ पर सावित्री बगैर कुछ कहे हुए रमणी को अपने गैरेज से कार निकालते हुए निहारती नजर आती है जो कि निश्चित ही उसकी निर्बलता को बयान करती है क्योंकि वह एक बार भी यह नहीं कह पाती है कि एक रूपया शाम की सब्जी के लिए पर्याप्त है या नहीं। यह सावित्री के दब्बू होने का भी प्रतीक है वहीं दूसरी ओर सावित्री की सहेली गंगू अपने पति को पूरी तरह से अपने नियंत्रण में रखती है। यहां पर सावित्री की निर्बलता इस आधार पर है कि वह हमेशा अपने पति रमणी द्वारा ही नियंत्रित की जाती है, जबकि गंगू अपने पति पर नियंत्रण रखने में सक्षम रहती है।

सावित्री चूँकि आर्थिक रूप से पूरी तरह अपने पति रमणी पर आश्रित थी जिसके कारण उसे किसी बात का निर्णय का कोई अधिकार न था और प्रायः हार कर वह अपने घर में भंडार के पास वाले अंधेरे कमरे में चली जाती थी, जो कि उसकी निर्बलता का सबसे बड़ा उदाहरण माना जा सकता है।

उपन्यास में जब नौकरों के संदर्भ में बात आती है तो बात स्पष्ट हो जाती है कि न तो वे आर्थिक और न ही शैक्षणिक आधार पर सबल है। रंगा जो कि सावित्री के यहां लकड़ी चीरने का काम करता था, बताता है कि उसने किसी कारण वश अपने पुत्र की एक बार पिटाई कर दी तो उस पर उसकी पत्नी अपने हाथ में लिए हुए पीतल के बरतन से उसकी पिटाई कर देती है। इस पर वह कहता है कि तब से मैं बच्चों के मामले में दखल नहीं देता हूँ। चाहे वे कुएं में गिर जायें। औरत का मामला बड़ा बेढ़ब होता है। जब कि वहीं पर दूसरी तरफ सावित्री का रसोइंया बताता है कि वह अपनी पत्नी की किसी भी दखलदांजी पर उसकी हड्डी–पसली एक कर देता है। यहां पर दोनों की स्थिति में एक की पत्नी सबल और दूसरे की पत्नी निर्बल पायी जाती है। "सावित्री अपनी निर्बल स्थिति का बयान करते हुए कहती है कि असल में हमारी इस हालात के लिए हम खुद जिम्मेदार है। हम स्त्रियां आप पुरूषों का दिया हुआ भोजन, आश्रय और दूसरी सुविधाएं स्वीकार करती है और इसी से हमारी यह हालत है।

यदि अब नारायण के उपन्यास 'द गाईड' की स्त्री–स्थिति का सबलता एवं निर्बलता के आधार पर अवलोकन करें तो पता चलता है रोजी जो कि उपन्यास की मुख्य पात्र है अपनी नृत्य कला के माध्यम से एक आर्थिक रूप से मजबूत स्त्री बन जाती है जो उसे आर्थिक रूप से सबलता का अनुभव तो प्रदान करता है परन्तु वह इस स्थिति में आत्म–संतुष्टि प्राप्त करने में सक्षम नहीं महसूस करती है, जिसका कारण उसका उसके पति के प्रति गहरा लगाव माना जा सकता है। एक तरफ वह अपनी इच्छा पूर्ति के लिए अपने पति से अलग होती है और वहीं दूसरी तरफ एक धनवान स्त्री की स्थिति को प्राप्त कर लेना उसे सबल तो बना देता है लेकिन उसका मार्को के प्रति लगाव और पत्नी धर्म की इच्छा उसे निर्बल भी बनाता है। इस प्रकार से वह सबलता और निर्बलता दोनों ही प्रकार की स्त्री का चित्रण विरोधाभासी रूप से प्रस्तुत करती है।

दूसरी निर्बल स्त्री का चित्रण राजू की मां का है जो परम्परागत जीवन यापन में विश्वास रखती है। वह राजू के द्वारा कमायें हुए धन से ही अपना जीवन निर्वाह करती है। वह आत्म निर्भर न होने की वजह से निर्बल स्त्री का चित्रण ही प्रस्तुत करती है।

स्त्री की शिक्षा के आधार पर स्थिति

स्त्री के सबल और निर्बल होने की स्थिति में उसकी शिक्षा की महत्व पूर्ण भूमिका होती है। समाज सुधार की परम्परा में नेहरू शिक्षा को एक महत्वपूर्ण आधार मानते हैं, जिसके द्वारा सामाजिक परिवर्तन सम्भव हो सकता है। स्त्री की शिक्षा के महत्व पर वह विशेष बल देते हैं। अपने एक वक्तव्य में बताते हैं कि एक बार पुरुष की शिक्षा को तो नजर अंदाज किया जा सकता है लेकिन यह सम्भव नहीं है कि स्त्री की शिक्षा को नजरअंदाज किया जाये। वे यह भी बताते हैं कि शिक्षा न केवल स्त्री को मां, पत्नी, बहन के भूमिका अपने कार्यों को पूरा करने में अधिक समर्थ बनायेगी अपितु उन्हें आर्थिक प्रतियोगी भी बनायेगी। वे स्त्री की शिक्षा को बाधित करने की आलोचना करते हें। उनके अनुसार एक स्त्री को अच्छी शिक्षा प्रदान की जानी चाहिए, और उन्हें हर व्यवसाय और क्षेत्र में प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए जो कि उनको परम्परागत व्यवसाओं और आदर्शों से बाहर अन्य क्षेत्रों तक ले जाने में सक्षम होगा। इस प्रकार से वे स्त्री को उसके लिंग पर आधारित कार्यों से बाहर लाना चाहते थे, और परम्परागत स्त्री भूमिकाओं को तोड़ने में विश्वास करते थे (Jain & Mahan 1996)।

नारायण के उपन्यास 'द डार्क रूम' में गंगू जो कि सावित्री की सहेली है का सपना फिल्म नायिका बनने का था। वह व्यावसायिक संगीतकार भी बनना चाहती थी। इस सब के लिए वह अंग्रेजी को अधिक महत्व देती थी और कहती थी कि केवल अंग्रेजी की पत्रिकाएँ पढ़ लेने या वैवाहिक जीवन के प्रारम्भ में अंग्रेजी पत्र लिख देने जितनी ही जानकारी काफी नहीं है। अंग्रेजी सीखने के लिए उसने ट्यूटर भी नियुक्त कर रखी थी और हर सप्ताह वह दो फिल्में भी देखती थी, उन्हें ऊंटपटांग बाते करने की आजादी थी और जब चाहे घर से निकल पड़ती थी। जहां इच्छा हो जाती थी और जोर–जोर से बातें करती थी। ये सारी विशेषताएं निश्चित ही तौर पर गंगू को सबल स्त्री की स्थिति में लाने से कोई इंकार नहीं कर सकता है। जबकि दूसरी तरफ सावित्री को जब उनके पति घर पर हो तो उन्हें घर से बाहर जाने की आजादी बिल्कुल नहीं थी। फिल्म तो हमेशा अपने पति के साथ ही देखने का अवसर प्राप्त होता था। यह सब गंगू को सबल स्त्री के रूप में दर्शाता जो कि पितृसत्तात्मक बंधंनो से काफी हद तक विरूद्ध कार्य कर सकती थीं लेकिन सावित्री बिल्कुल नहीं। सावित्री की दूसरी सहेली जानम्मा की स्थिति भी सावित्री की तरह पायी गयी है। 'द डार्क रूम' में शांताबाई का चित्रण एक शिक्षित स्त्री का है जो कि अपने बारे में काफी स्पष्टवादी है और सामाजिक संस्थाओं के विरूद्ध खड़ी होते देखी गयी है। उसने अपने पति को, उसके जुआरी, शराबी और व्यसन में लिप्त होने की वजह से त्याग दिया था।

दूसरी तरफ उसने अपने माता–पिता को भी त्याग दिया क्योंकि वे इसके कार्य से खुश नहीं थे। इन परिस्थितियों के बावजूद भी उसने अपनी पढ़ाई जारी रखते हुए अपने दम पर बी.ए. किया। उसके इस प्रकार के कार्यो से यह बात स्पष्ट होती है कि वह पितृसत्तात्मक समाज की चुनौती देती है और स्वनिर्भर होकर अपना स्वतंत्र जीवन व्यतीत करती है।

दूसरी तरफ वह अपनी निर्बलता अपनी इस बात से जाहिर करती है कि 'कौन कहता है कि स्त्रियों के शिक्षा प्राप्त कर लेने से उनका उद्धार हो जाता है, यह निरी बकवास है। ऐसा कुछ नहीं होता। उनके लिए भी नौकरी की समस्या वैसी ही है जैसे पुरूषों के लिए'।

शांताबाई एक तरह से पितृसत्तात्मक संस्थाओं का त्याग कर सबल स्त्री का चित्रण प्रस्तुत करती है, लेकिन दूसरी तरफ शिक्षा प्राप्ति के बाद भी नौकरी न मिल पाने परं निर्बल दिखाई पड़ती

है। अंत में शांताबाई रमणी के दफ्तर में नियुक्त होकर आर्थिक निर्भरता प्राप्त कर लेती है जो कि उसे अपने आप में सबल बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती है। शांताबाई अपने इच्छानुसार क्लब एवं सिनेमा देखने को स्वतंत्रत थी तथा कहीं भी घूम फिर सकती थी जो कि उसकी सबलता का परिचायक है क्योंकि ये बातें सामान्य स्त्री के द्वारा कर पाना असम्भव था। जैसा कि हमें सावित्री की असहाय स्थिति से पता चलता है कि वह पितृसत्तात्मक समाज के उत्पीड़नों को सहन करती है और हमेशा के लिये अबला की ही स्थिति में ही रह जाती है।

जब सावित्री अपने पति का घर उसके ही दफ्तर में काम करने वाली महिला के साथ प्रेम प्रसंग के कारण क्रुद्ध होकर छोड़ देती है और कहती है कि "अपने बल पर मैं कर ही क्या सकती हूँ। अगर मैने ठीक–ठीक शिक्षा पायी होती तो अभी टीचर की या ऐसी ही कोई नौकरी पा सकती थी। मैंने अपनी पढ़ाई पूरी न करके मूर्खता की। यहां सावित्री इस प्रकार से अपनी निर्बलता को जाहिर करती है और साथ ही साथ स्व–निर्भरता के लिए शिक्षा के महत्व को भी रेखांकित करती है। अगर वह शिक्षित होती तो आत्म निर्भर होकर स्वतंत्र जीवन बिता सकती थी और अपना मजबूत आधार तैयार कर पाती। नारायण ने जातिगत आधार पर सबल और निर्बल नारी पात्रों को बखूबी चित्रित किया है। उपन्यास में पोन्नि, जो कि एक ताला बनाने वाली की पत्नी है, कहीं पर भी अपने पति से दबती हुई नहीं दिखती, वह हमेशा ही एक मजबूत इरादों के साथ अपने पति का सामना करते दिखायी पड़ती है जबकि सावित्री उच्च जाति की पृष्ठभूमि के बाद भी अधिक उत्पीड़ित दिखायी देती है।

उच्च जाति में स्त्री सबल और निर्बल में विभाजित देखी गई है, जिसमें सावित्री के माध्यम से उच्च जाति में स्त्री उत्पीड़न और स्त्री निर्बलता अधिक स्पष्ट चित्रित है जबकि निम्न जाति में यह उतना कठोर नहीं है। आर.के. नारायण के उपन्यास 'द गाइड' में मुख्य स्त्री पात्र रोजी का संबंध मंदिर में नृत्य करने वाली के खानदान से था। वह वैसे तो संगीत में परास्नातक थी जो कि उसके शिक्षित होने का प्रबल परिचायक है। शिक्षित होने के बाद भी वह पितृसत्तात्मक संरचना के बंधनों से मुक्त नहीं देखी गयी है और एक निर्बल और असहाय स्त्री का ही चित्रण प्रस्तुत करती है। शिक्षित होने के बावजूद उसे अपने पति के विरूद्ध किसी भी चीज का निर्णय लेने का अधिकार नहीं होता है। रोजी की सबसे तीब्र इच्छा एक सफल नृत्यांगना बनने की होती है लेकिन उसकी यह इच्छा पूरी नहीं होती है, इसके लिये जब तक वह अपने पति मार्को से अलग नहीं हो जाती है इसको पूरा कर पाने में अक्षम रही। यहां उसके शिक्षित होने और नृत्य में प्रशिक्षण प्राप्ति के बाद भी निर्बल स्त्री की ही अवस्था में पाया जाती है वह कुछ हद तक तो सबलता का परिचय प्रदान करती है परन्तु पूरी तरह से वह अपने आपको सबल बना पाने में अक्षम रहती है, शायद यह उसके शिक्षित होने का ही परिणाम होता है कि वह अपनी नृत्य की इच्छापूर्ति के लिए अपने पति मार्को से अलग हो पाती है और सामाजिक नियमों के विरूद्ध कदम उठा पाती है। अंत में हम पाते हैं कि वह अपने पति के साथ समझौते के लिए तैयार हो जाती है अर्थात इस आधार पर यह कहा जा सकता है कि एक स्त्री की शिक्षा के साथ–साथ उसमें दृढ़ता का होना भी आवश्यक है।

उपन्यास 'कला स्नातक' में मालती जो कि चंद्रन की प्रेमिका थी, निश्चित ही शिक्षित थी। क्योंकि चंद्रन ने उसे एक पत्र में लिखा था कि वह दो साल शादी के लिए इन्तजार नहीं कर सकता है। लेकिन मालती द्वारा इसका कोई उत्तर नहीं आया और उसकी शादी किसी अन्य लड़के से कर दी जाती है। अर्थात मालती शिक्षित होने के बाद भी इतनी निर्बल थी कि वह अपने प्रेमी चन्द्रन को

उत्तर न दे सकी और अपने माता पिता के अनुसार दूसरे लड़के से शादी कर लेती है। यहां उसकी शिक्षा का उपयोग उसके अपने स्वतंत्र जीवन और निर्णय से कोई लेना–देना न था, बल्कि उसे वैसा ही करना पड़ा जैसा कि उसके घर वाले चाहते थे। जिसमें उसकी इच्छा का कोई महत्व ही नहीं था। अर्थात वह एक निर्बल स्त्री का संकेत देती है। इस उपन्यास में दूसरी लड़की का चित्रण सुशीला के रूप में मिलता है जो छठी कक्षा में पढ़ रही थी। इसी के साथ चंद्रन का विवाह होना तय हुआ। यहां उसके छठवीं में पढ़ने का अर्थ केवल घर एवं परिवार को अच्छे से संभालने से ज्यादा कुछ भी न था। वह किसी रूप में सबल नहीं पायी गयी है। एक प्रसंग में वह चंद्रन को लिखती है कि वह अपना ध्यान रखें। सुबह जल्दी नहीं उठा करें और उसके कार्य के लिए प्रार्थना करती थी। यह सब उसके लिए एक धर्मपत्नी होने से ज्यादा कुछ नहीं था।

धर्म के आधार पर स्त्री की स्थिति

यदि नारीवादी अध्ययन की बात आती है तो सबसे पहला सवाल होता है स्त्रियां कहां है? यदि स्त्री–पुरूष दोनों धार्मिक कार्यों में भाग लेते है तो लिंग भेद क्यों? यहां पर स्त्रियों द्वारा सम्पादित धार्मिक कार्यों के आधार पर स्त्री सबलता एवं निर्बलता को लाने का प्रयास किया जायेगा। मुख्य रूप धार्मिक कार्यों में भी उन्हें वहीं कार्य या स्थिति प्रदान की जाती है जो कि परम्परागत आधार पर चला आता रहा है।

जैसा कि डोला कोस्टा नारीवादी शोध के लिए बताती है कि उन कार्यों को समझना अति आवश्यक हो जाता है जो कि किसी वेतन से परे है। हमें उन कार्यों को दृश्य बनाना है जो कि दैनिक जीवन में हम देखते हैं जैसे कि घरेलू कार्य, सामुदायिक कार्य, धार्मिक कार्य, लेकिन इन कार्यों को करने वाले और कार्य के मध्य भिन्नता ला पाना बहुत ही कठिन माना गया जिसका कारण लिंग के आधार पर इन कार्यों का घनिष्ठ संबंध बताया जाता है (Heyer- Gray 2000 : 468)।

धार्मिक कार्यों में या धार्मिक अनुष्ठानों में स्त्रियों को कम शारीरिक शक्ति लगने वाले कार्यों में वरीयता दी जाती है, जिसमें कि कुछ धार्मिक पुस्तकों को पढ़ने, हवन सामग्री तैयार करने और प्रसाद वितरण के कार्यों को करती है। धार्मिक अनुष्ठानों के समय स्त्रियों का मुख्य कार्य भोजन का प्रबंध करना और पकाना पाया जाता है जो कि व्यक्तिगत और निजी माना जाता है। सार्वजनिक कार्यों को पुरूषों द्वारा किया जाता है।

स्त्रियां प्रमुख तौर पर धार्मिक कार्यों में पुरूषों के पूरक रूप में अपनी भूमिका अदा करती है न कि मुख्य भूमिका में नेतृत्व प्रदान करती हैं। सार्वजनिक कार्यों को वे कम ही करती हैं। इस प्रकार से यह कहा जा सकता है कि धार्मिक कार्यों का बटवारा भी लिंग आधार से परे नहीं है जो कि उनकी सबल और निर्बल की स्थिति को निर्धारित करता है।

नारायण के उपन्यास 'द डार्क रूम' मुख्य स्त्री पात्र सावित्री अपने पति को सुबह दफ्तर के लिए विदा करने के बाद पूजा–पाठ करती है। पूजाघर में जाकर धूप–दीप जलाती है और देवी देवताओं पर फूल अर्पण करने के बाद ही अपना भोजन करती है जो कि उसका नित्य का काम है।

सावित्री के द्वारा इस उपन्यास के एक प्रसंग में अपनी निर्बलता के बारे में कहती है 'मैं भी एक इंसान हूँ। हालांकि तुम पुरूष लोग इस बात को कभी नहीं मानोगे। तुम सोंचते हो तुम लोग जब हमसे खेलना चाहो, हम तुम्हारे खिलौने हैं और बाकी समय तुम्हारे गुलाम है। पर ऐसा नहीं है।

यह मत सोचो कि तुम जब इच्छा हो हमारे हो, हमारे प्रति प्रेम जता सकते हो और जब इच्छा हो ठोकर मार सकते हो'।

इस प्रसंग में यह सावित्री अपनी निर्बलता की कुंठा के फलस्वरूप कहती है क्योंकि वह अपने पति को शांताबाई के प्रेम–प्रसंग से मुक्त करा पाने में अक्षम हो जाती है। इस उपन्यास में सावित्री और उसकी मित्र जानम्मा दोनों ही अत्यधिक धार्मिक प्रवृत्ति की है जो बिना पूजा–पाठ के अपना भोजन तक ग्रहण नहीं करती हैं। उनके धार्मिक होने का सबसे बड़ा कारण उनका अल्पशिक्षित होना तथा आर्थिक रूप से आत्म निर्भर न होना है जो कि उन्हें पारिवारिक और वैवाहिक जीवन जीने के लिए मजबूर कर देता है और परम्परागत तरीके से जीवन जीने में धर्म का सहारा अपने को आंतरिक रूप से संतुष्टि प्रदान करने का एक साधन है।

ठीक उसी प्रकार से 'द गाइड' मेंं धार्मिक होने का संकेत राजू (जो कि एक गाइड का काम करता है) की मां है। राजू की माँ एक पूर्ण धार्मिक और पतिव्रता महिला का चित्रण प्रस्तुत करती है क्योंकि वह न तो शिक्षित है न ही आर्थिक रूप से आत्म निर्भर, बल्कि राजू के द्वारा कमाए हुए धन से अपना जीवन पालती है। उसकी निर्बलता उसे धार्मिक होने को मजबूर करती है जिससे वह पितृसत्तात्मक संरचना के द्वारा निर्धारित जीवन जीने को ही बढ़ावा देती है। एक प्रसंग में वह रोजी, जो कि उपन्यास की मुख्य किरदार है, से कहती है कि पत्नी धर्म निभाना इतना आसान नहीं है उसके लिए बहुत त्याग और आत्मबलिदान की आवश्यकता होती है। पत्नी धर्म का निर्वाह करने के लिए संस्कारों और परम्पराओं का पालन अति आवश्यक है। क्योंकि धर्म हमेशा धार्मिक नियमों एवं अनुष्ठानों द्वारा पत्नी को पतिव्रता होना सिखाता है।

जैसा कि स्वतंत्र स्त्री का रूप ऋग वेद में बताया गया है कि – ''अहम् रूद्रेमिह वासुभिः चारमाथहम् यडियोरित् विश्विदवैह'' अर्थात मैं रूद्र और वासु, आदित्य, विश्विद्वास और ब्रहमचारियों के समूह के साथ खेलती हूँ। मैं मित्रा और करून, इंद्र और अग्नि और अश्विन के साथ–साथ चलती हूँ। मैं सोम को लेकर चलती हूँ, जो दुश्मनों का नाश करती हैं इन सब गुणों एवं कार्यों वाली स्त्री को स्वतंत्र माना गया है।[5] (Jain & Mahan 1996 : 101)

आर्थिक रूप से एक स्त्री के स्वतंत्र होने के लिए उसे इन दैवीय गुणों से संयुक्त होना चाहिए। जिससे कि उसे अपने विरूद्ध लोगों का सामना कर सके। इस प्रकार के गुण निश्चित ही एक स्त्री को धार्मिक कार्यों से बांधते हैं, जो कि उसे स्वतंत्रता का एक झूठा अनुभव मात्र ही प्रदान करते हैं। धार्मिक होना एक स्त्री को उसके परिवार एवं वैवाहिक जीवन में अधीन स्थिति को दिलाने में हमेशा सहायक रहा है जिसमें कि स्त्री को पितृसत्तात्मक संरचनाओं से अधिक मजबूती से बांध कर रखा जा सके और पितृसत्तात्मक कार्यों की पूर्ति के लिए प्रेरित किया जाता रहे।

इस प्रकार से धर्म के द्वारा एक स्त्री को पुरूष के अधीन उचित ठहरा कर निर्बलता को मान्य बना दिया जाता है। ''धर्म दूसरी तरफ व्यक्तिगत और सार्वजनिक क्षेत्र विभाजन में भी मदद प्रदान करता है।'' जिसके अन्तर्गत एक स्त्री के कंधों पर पारिवारिक और वैवाहिक जीवन के निर्वाह की जिम्मेदारियां रख दी जाती है। इस प्रकार एक स्त्री को निर्बल स्थिति में ला दिया जाता है। जो पारिवारिक दायित्वों से कभी मुक्त होकर अपनी स्वतंत्रता अस्मिता का अनुभव ही नहीं कर पाती।

'द गाइड' में रोजी जो मार्को की पत्नी रहती है अपनी नृत्य इच्छा की पूर्ति के लिए अपने पति से अलग तो हो जाती है परन्तु उसकी धर्मपत्नी और आदर्श नारी का रूप उसे कभी मार्को से

बिल्कुल अलग रहकर अपनी स्वतंत्रता को अनुभव नहीं करने देता। उपन्यास में रोजी का चित्रण एक आदर्श नारी का ही है जो कि उसे प्रारम्भ से लेकर अन्त तक इस आदर्श स्थिति से निकल पाने में बाधक बनी रहती है। रोजी एक तरफ तो अपने पति से अलग होकर एक सशक्त स्त्री का परिचय देती है परन्तु दूसरी तरफ अपने पति को हमेशा महसूस करते रहने से वह उससे कभी स्वतंत्र होकर अपने आपको अनुभव कर पाने में अक्षम पाती है इस प्रकार वह सबल और निर्बल दोनों ही स्थितियों का चित्रण करती है इस प्रकार का स्त्री–चित्रण नारायण की काल्पनिक कला की एक सामान्य विशेषता रही है।

नारायण के अन्य उपन्यास 'कला स्नातक' में चंद्रन की मां माला फेरते हुए राम का पवित्र नाम लेते हुए और मन में आंशिक रूप से अपने पति, गृहस्थी, बच्चे से संबंधित विषय में विचार करते हुए देखी जाती है अर्थात चंद्रन की मां एक धार्मिक महिला है जो पितृसत्तात्मक संरचना द्वारा निर्धारित मूल्यों का वहन को बाध्य है। चंद्रन एक बार नदी के किनारे घूमती हुयी मालती नाम की लड़की के प्यार में पड़ जाता है और सोचता है कि यदि वह चौदह साल से ज्यादा की हुई तो वह विवाहिता होनी चाहिए। किसी विवाहित लड़की के बारे में सोचने से क्या फायदा? यह अनुचित है अर्थात स्त्रियां यहां इतनी निर्बल थी उनकी एक उम्र तक आते–आते शादी हो जाती थी। सप्ताह में दो दिन वह लड़की नदी के किनारे घूमने नहीं आती थी। इस पर चंद्रन ने कल्पना कि वह शायद इन दो दिनों में मंदिर जाती होगी, जो स्त्रियों के लिये अनिवार्य माना जाता था। चंद्रन की मां पितृसत्तात्मक संरचना में बंधी तो थी लेकिन उन्हें अपनी सहेलियों के यहां जाना प्रतिबंधित नहीं था। लेकिन वह पूरी तरह इतनी सबल नहीं थी कि अपने मत के अनुसार कुछ भी कर सकें।

उपन्यास में चंद्रन का मांगलिक होना उसके और मालती के प्रेम संबंध में बाधक सिद्ध हुआ, जिसमें की दोनों ही प्रभावित हुए और अलग–अलग लड़का–लड़की से शादी करनी पड़ी। अर्थात मालती किसी भी रूप में इतनी सक्षम न थी अपने मां बाप के विरूद्ध होकर चंद्रन से शादी कर पाती। चंदन की मां पितृसत्तात्मक संरचना में इस सीमा तक बंधी थी कि लड़के के मांगलिक होने के दोष के लिये भी लड़की को ही कोसती है।

चंद्रन की शादी को लेकर उसकी मां लड़की देखने के संदर्भ में बताती है कि विवाह के लिए लड़की की कुंडली दसियों जगह भेजी जाती है और उन्हें दसियों बार देखा जाता है, इसे उसकी मां गलत नहीं मानती है, बल्कि बताती है कि यह तो हमेशा से चला आया है इसमें बुरा मानने जैसी कोई बात ही नहीं है अर्थात लड़की को शादी के लिए कितनी भी बार मना किया जा सकता हैं। इसे सामाजिक रूप से बिल्कुल बुरा नहीं माना जाता है।

इस प्रकार स्त्री की सबलता एवं निर्बलता को उनके शिक्षित, अशिक्षित होने या आर्थिक रूप से निर्भर होने आदि पर अधिक निर्भर नहीं देखा गया है। नारायण शायद स्त्री की सबलता व निर्बलता के संदर्भ में तथ्यों को व्यंगात्मक रूप में प्रकट करने में विश्वास रखते हैं जो कि स्त्री को कभी सबल तथा कभी निर्बल दिखाते हुए प्रतीत होते हैं।

निष्कर्ष

नारीवादी आलोचना का मुख्य आलोचनात्मक कार्य पहले से प्रस्तुत साहित्य, ग्रंथों को एक नई दृष्टि से समझने का प्रयास है और उस दिशा की तरफ संकेत करना है जो कि मुख्य धारा (पुरूषों द्वारा निर्मित धारा) के द्वारा हमेशा नकारा जाता रहा है। यदि हम वास्तव में साहित्य एवं

धर्म ग्रंथों या अन्य स्रोतों की गूढ़ बातों की वास्तविकता जानना चाहते हैं तो यह आवश्यक हो जाता है कि प्रस्तुत स्रोतों का एक नई दृष्टिकोण से विश्लेषण किया जाये। स्त्रियों के बारे में यदि गहनता से देखा जाए तो जहां हम कल के बारे में अग्रदूत थे। वहीं आज के संदर्भ में उन्हीं मूल्यों को पीछे ले जाते हैं। माँ के रूप में उनके बंधे हाथों को ही देखते हैं जिसमें कि उसके लिए केवल प्यार ही एक मात्र सहारा नजर आता है। हम लोग केवल मुस्कराते हुए नजर आते हैं और खुद भी उन स्त्रियों के उत्पीड़न के लिए कुछ नहीं कर पाते हैं। साहित्य हमारे काल्पनिक दशा का रूप है और साथ ही साथ एक आलोचनात्मक आवाज का स्रोत भी है। अंग्रेजी–भारतीय साहित्य में स्त्री पक्षों की आलोचनात्मक रूप से यह आवश्यक माना जाता है कि उस समय के समाज तथा साहित्य को आमने–सामने लाकर एक धरातल पर समझा जाये। जैसा कि सांड्रा हार्डिंग भी इस बात को मानती है कि स्त्री प्रश्नों को समझने के लिए स्त्री प्रश्नों को और पितृसत्तात्मक समाज को एक स्तर पर लाकर आलोचनात्मक रूप से वस्तुनिष्ठ विश्लेषण किया जाना चाहिए।

आर.के. नारायण के उपन्यास निश्चित रूपसे उन दमनात्मक पक्षों का चित्रण करते हैं जो कि स्त्री की व्यक्तिगत चेतना और आत्मपन का प्रदर्शन भी देखने को मिलता है, जो कि पूर्ण न होकर आंशिक स्तर पर महसूस किया जा सकता है। समाज का स्त्री के प्रति व्यवहार में परिवर्तन लाने में सहायक बन सकता है। नारायण के उपन्यास में सांस्कृतिक और नैतिक पक्ष, केन्द्र बिन्दु के रूप में रहे हैं जिन्हें उन्होंने स्त्री शोषण से देखने का प्रयास किया है। आर.के. नारायण के उपन्यासों में माँ, पत्नी और बहनों की भूमिका में स्त्रियाँ कष्टों को सहने वाली या धैर्यवान, सहनशील, स्थितियों से समझौता करने वाली पायी गयी है। इनके उपन्यासों में स्त्री भूमिका से जुड़ी भिन्न स्थितियों के मध्य संतुलन बनाती हुई देखी गयी है। इन उपन्यासों में सामाजिक संस्थाओं जैसे परिवार एवं विवाह का भी चित्रण स्पष्टता से प्रदर्शित करने की कोशिश की गयी है, लेकिन उन तथ्यों को कम देखा गया है जो कि इन संस्थाओं के मध्य बाधा के रूप में आये या चुनौती खड़ा कर सके। नारायण, माता–पिता द्वारा प्रबंध–विवाह और इसमें रिश्तों के गहरे धब्बों को प्रस्तुत करने में सक्षम देखे गये हैं। नारायण भारतीय विवाह में उन तनावों को भी दिखाने में सक्षम रहे हैं जो कि जीवन में तनाव एवं उत्पीड़न पैदा करते हैं इनके द्वारा भारतीय स्त्री का आदर्श रूप उसकी अच्छेपन और सहयोग की ही भावना से प्रदर्शित होता है तथा साथ ही साथ अमानवीय पक्षों को भी दर्शाते हैं जैसा कि हम नारायण के उपन्यास 'द डार्क रूम' में देखते हैं कि एक स्त्री अपनी स्थिति से किस तरह से समझौता करके घर पर वापस आ जाती हे और उसके लिए घर के बाहर की दुनियां में कोई जगह नहीं बचती है जहां वह स्वतंत्र एवं सम्मान से अकेला जीवन व्यतीत कर सके। नारायण निश्चित रूप से अपने जीवन के अनुभवों को अपने उपन्यास के किरदारों के माध्यम से समाज के विभिन्न पक्षों का सूक्ष्म चित्रण प्रस्तुत करते हैं जिसमें कि स्त्रियाँ अलगाववाद, पार्श्वीकरण की अवस्था को महसूस करती हैं। इन्होंने स्त्री पात्रों द्वारा चुपचाप कष्टों को सहन करना प्रबलता से प्रस्तुत किया है। आर.के. नारायण पुरूष पात्रों के माध्यम से समाज की संरचना को प्रदर्शित करने में भी अच्छी तरह सफल पाये गये हैं। यह पितृसत्तात्मक समाज में उत्पीड़न घर के अंदर हो या बाहर। घर के अंदर वे घरेलू प्रताड़ना को पति और पत्नी के संबंध के माध्यम से प्रदर्शित करते हैं। स्त्री इच्छा के संदर्भ में यह देखा गया है किस तरह से एक स्त्री की इच्छाओं का दमन पुरूष अपने पुरूषत्व के आधार पर करता है दूसरी तरफ इसकी विपरीत स्थिति में स्त्री की आकांक्षा को एक पुरूष के द्वारा पूर्ण किया जाता है इस प्रकार

वे अप्रत्यक्ष रूप में पुरूष की भूमिका का चित्रण करते हैं और सामाजिक दृष्टि से पुरूष वर्चस्व को प्रस्तुत करते हैं। जिसका उदाहरण 'द गाइड' को माना जा सकता है। पत्नी किरदार द्वारा आर.के. नारायण अपने उपन्यासों में भारतीय हिन्दू पत्नी के आदर्श रूप को प्रदर्शित करते हैं, जिससे पत्नी हमेशा हिन्दूं धर्म के अनुसार निर्धारित धर्मपत्नी की विशेषताओं को बखूबी निभाती दिखाई गयी है। आर.के. नारायण का मुख्य स्त्री पक्ष केवल हिंदू स्त्री का ही चित्रण प्रदान करता है यह अजीब बात है कि वे अन्य धर्मों की स्त्रियों का चित्रण क्यों नहीं कर पाये।

नारायण अपने उपन्यासों के माध्यम से कई बार पुरूष के सन्यासी होने की स्थिति को भी दर्शाते हैं। जिसमें कि या तो वे गलती से सन्यासी समझ लिए जाते हें या फिर परिस्थिति की मांग के अनुसार सन्यासी होने का प्रदर्शन करते हैं। जैसा कि हम जानते हैं किसी का सन्यासी होना भी हिन्दू धर्म के चार आश्रमों में से एक है जो कि एक व्यक्ति को अपने जीवन काल में निर्वाह करना ही चाहिए। इस अवस्था को नारायण व्यंगात्मक रूप से प्रस्तुत करते हैं जिसमें यह स्वेच्छा से न होकर परिस्थितियों की मांग के आधार पर पाया जाता है लेकिन वे स्त्री–सन्यासी का कोई भी उदाहरण प्रस्तुत नहीं करते हैं।

भारतीय स्त्री की पत्नी की भूमिका में वे उसे पतिव्रता के रुप में प्रस्तुत करते हैं जिसके जीवन का मुख्य उद्देश्य अपने पति एवं बच्चों के लिए समर्पित रहना है तथा यह एक महत्वपूर्ण विशेषता मानी गयी है, जिसमें शादी को प्रमुख स्थान दिया गया है जहाँ कि एक व्यक्ति का बंधना प्राकृतिक माना गया है। इस बंधन में उस पर वफादारी और पत्नी धर्म का भार लाद दिया जाता है। पतिव्रता के रूप में स्त्री चित्रण सौभाग्वती की तस्वीर प्रस्तुत करता है जिसमें कि एक स्त्री शुभ संकेतों को लाने वाली अपने पति की हमेशा लम्बी उम्र की कामना करती हुई देखी गयी है। इसके लिए उसको सारे प्रकार के कष्टों को सहने वाली कहा गया है और एक ऐसी स्त्री का चित्रण पाया गया है जो कि परम्परागत रूप से पवित्र वफादार, धैर्यवान सहनशील, आत्म–बलिदानी, शिकायत न करने वाली बताया है। ये विशेषताएं एक स्त्री से हमेशा अपेक्षित रही है जो उसके आदर्श बनने में सहयक मानी गयी है। पितृसत्तात्मक समाज ने इन विशेषताओं के आधार पर स्त्री के आदर्श को गढ़ा है और इनका निर्वाह करना एक स्त्री का कर्तव्य माना है, जो स्त्री इसका निर्वाह नहीं करती है वे निम्न और असामाजिक कहकर तिरस्कृत की गई है।

आर.के. नारायण संस्कृति एवं धार्मिक परम्परा में शुभ और अशुभ संकेतों का भी प्रस्तुतीकरण करते हुए पाये गये हैं, जो कि मानव जीवन को प्रभावित करते हैं, जैसा कि अपने उपन्यास के माध्यम से किसी के मांगलिक होने का प्रभाव जीवन पर दर्शाते हैं जिसमें कि न केवल लड़की बल्कि लड़का भी सहन करता है। ज्यादातर दोष लड़की के माथे पर मढ़ दिया जाता है। आर.के. नारायण उपन्यास के माध्यम से स्त्री के आद्यरूप और परम्परागत रूप को प्रस्तुत करते हैं जिसके द्वारा स्त्री की वास्तविक स्थिति को समझा जा सकता है। आद्यरूप के द्वारा उस स्थिति का चित्रण मिलता है जो कि स्त्री–छवि का स्रोत और आदर्श तस्वीर को सामने लाने में सहायक होता है तथा दूसरा परम्परागत रूप स्त्री की मूक स्थिति और सहनशील छवि को सामने लाने में सहायता प्रदान करता है और अंत में उस स्थिति को जानना जिसमें कि स्त्री उन मूल्यों का खण्डन करती है, जो पितृसत्तात्मक आधार पर बनाये गये हैं। नारायण के उपन्यास में स्त्री के आद्यरूप और परम्परागत रूपों को तो बखूबी दिखाते हैं लेकिन उन स्त्रियों को बहुत प्रभावी तरीके से सामने लाने में कम

समर्थ पाये गये हैं। जो कि पितृसत्ता के विरूद्ध अपनी आवाज उठाती है। जैसे देखा जाय तो 'दि डार्क रूम' में शांताबाई का चित्रण स्पष्ट रूप में यह नहीं दर्शाता है कि वह पितृसत्ता की संरचना से बाहर है या उसकी परिधि में है कुछ हद तक वह इस संरचना से तो बाहर ही दिखती है परन्तु उसकी स्थिति पूरी तरह से स्पष्ट नहीं दिखाई पड़ती है।

नारायण पुराणों में वर्णित धर्मपत्नी का प्रारूप प्रदर्शित करते हैं जैसे कि रमणी द्वारा सावित्री का उनके खाना न खाने से पहले को पत्नीधर्म से जोड़कर देखा गया है और रमणी सावित्री की प्रशंसा करते हुए कहता है तुम वैसी ही पत्नी हो जैसे कि पुराणों में कहा गया है। यदि मारकाण्डेय पुराण में स्त्री का चित्रण देखे तो कहा गया है कि स्त्री दया का रूप है जो कि उसकी स्त्रीत्व की अस्मिता को दर्शाता है और साथ ही यह कहा गया है कि यदि वह रूष्ट हो तो अग्नि के समान है। लेकिन बाद में समाज के विकास में साथ–साथ स्त्रियों पर आर्थिक उत्पीड़न और प्रतिबंध बढ़ते गये और परिवार के क्रम को बनाये रखने के लिए स्त्री के कंधो पर ये जिम्मेदारी मढ़ दी गयी कि वहीं इसकी वाहक होगी। यहाँ पर उसे अधिकार और निर्णय लेने की शक्ति से पृथक कर दिया गया इनके कंधों पर परम्परा को ढोने का बोझ रख दिया गया, जो कि नारायण के उपन्यासों में स्पष्टतः दिखाई पड़ता है। माँ की भूमिका घर के अंदर अपने पति और बच्चों की सेवक से ज्यादा कुछ नहीं है और बाद में यही जिम्मेदारी पत्नी की भूमिका में देखी गयी है। पिता की भूमिका में यह बात कहीं नहीं आती है किस चीज से एक स्त्री खुश होती है या नहीं होती है वह केवल अपने सुख के लिए जीता चला जाता है। बार–बार यह प्रयास भी पाया गया है कि स्त्री को स्त्री बनाया जाये और उसे उसके कर्तव्यों को बनाते रहा जाये।

यहाँ नारीवादी दृष्टि से इन उपन्यासों का अध्ययन पितृसत्तात्मक समाज की संरचना में स्त्री के उन पक्षों को समझना है जिसके आधार पर एक ऐसे समाज की परिकल्पना तैयार हो सके। जिसमें स्त्री को जीवन के हर क्षेत्र में समानता के स्तर पर लाया जा सके क्योंकि इस बात से इंकार नहीं किया जा सकता है कि देश या राष्ट्र का विकास केवल पुरूषों द्वारा ही पूर्ण किया जा सकता है बल्कि स्त्रियों की भूमिका भी उतनी ही महत्वपूर्ण है जितनी कि पुरूषों का। यदि हम स्त्री पक्षों को समाज के विकास की मुख्य धारा से नहीं जोड़ते हैं तो देश का सम्पूर्ण विकास होना सम्भव नहीं है। नारीवादी दृष्टिकोण से स्त्री को उस परम्पराबद्ध स्तर से बाहर निकलना है जिसमें वे हमेशा दबी, सहनशील और दया की पात्र समझी जाती रही है, उनके गुणों को अवसर प्रदान करना अति आवश्यक हो जाता है। साहित्य के प्रत्येक पक्ष की सृजनात्मक तरीके से व्याख्या करने की आवश्यकता है जिसमें की स्त्री की भूमिका उतनी ही महत्वपूर्ण है जितनी एक पुरूष की। इन उपन्यासों के माध्यम से उन ध्वनियों को बाहर लाना है हो कि पितृसत्ता की संरचना द्वारा हमेशा दबायी जाती रही है। अन्यथा हम सारी विकास की प्रक्रियाओं के बावजूद भी रूढ़िवादी और प्राचीन काल से चले आ रहे स्त्री समस्याओं को हल कर पाने में असमर्थ ही रहेगें। हमारी ये असमर्थता हमें विकास की प्रक्रिया में शामिल होने के मार्ग में हमेशा बाधा ही उत्पन्न करेगी। शायद इसीलिए हमें नयी सोच और नये दृष्टिकोण से समाज के हर पक्ष को समझना जरूरी हो गया है, जिसमें की स्त्री को समानता के धरातल पर बिना किसी लिंगभेद के लाया जा सके।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

Kumkum Sangiri and Sudesh Vaid, 1989: Recasting Women, New Delhi: Kali for Women.

Pratibha Jain and Rajan Mahan, 1996: Women Images, Jaipur : Rawat Publications.

Zoey A. Heyer- Gray 2000: ‘ Gender and Religious Work’ : Sociology of Religion, Vol. 61, No. 4, pp. 467-471